Impact Factor – 6.261 ISSN – 2348-7143

INTERNATIONAL RESEARCH FELLOWS ASSOCIATION'S

RESEARCH JOURNEY

Multidisciplinary International E-research Journal

PEER REFREED & INDEXED JOURNAL

February-2019 Special Issue –2

इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य : संवेदना के स्वर

Guest Editor:
Dr.Prakash K. Koparde
Dr. V.V.Arya
Dept.Of Hindi,
Vaidhnath College, Parli-Vaijnath, Dist. Beed

Chief Editor -
Dr. Dhanraj T. Dhangar,
Assist. Prof. (Marathi),
MGV'S Arts & Commerce College,
Yeola, Dist – Nashik [M.S.] INDIA

SWATIDHAN INTERNATIONAL PUBLICATIONS
For Details Visit To : www.researchjourney.net

© All rights reserved with the authors & publisher

Price : Rs. 800/-

This Journal is indexed in :
- University Grants Commission (UGC)
- Scientific Journal Impact Factor (SJIF)
- Cosmoc Impact Factor (CIF)
- Global Impact Factor (GIF)
- International Impact Factor Services (IIFS)

Professor
J.B.S.P.Mandal's
Mahila Mahavidyalaya, Ta.Georai, Dist. Beed

'RESEARCH JOURNEY' International Multidisciplinary E- Research Journal
Impact Factor - (SJIF) - 6.261, (CIF) - 3.452(2015), (GIF)-0.676 (2013)
Special Issue -2- इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य : संवेदना के स्वर
ISSN : 2348-7143
February-2019

INDEX

o.	Title of the Paper	Author's Name	Page No.
1	रेत उपन्यास में देह–व्यापार नारी विमर्श.....	–डॉ. जिजाबराव विश्वासराव पाटील	05
2	दलित कविता : संघर्ष की गाथा	- प्रा.डॉ. न.पु. काळे	08
3	ओमप्रकाश वाल्मीकि के कहानी संग्रह 'सलाम' में दलित चेतना	- प्रा.डॉ.विष्णु जी.राठोड	11
4	हिंदी साहित्य में दलित चेतना	- प्रा. चौधरी शफिक लतिफ	13
5	उदय प्रकाश की कविता में राजनैतिक संवेदना ('एक -------	- प्रा. डॉ. गजानन सवने	15
6	मैत्रेयी पुष्पा के कथा–साहित्य में स्त्री.....	-डॉ. तुपे प्रविण तुळशीराम	17
7	'रजत रानी 'मीनू' की कहानियों में चित्रित...	–डॉ.हनुमंत दत्तु शेवाळे	20
8	नारी-विमर्श और साहित्य	- डॉ.शेखर घुंगरवार	24
9	एक्कीसवी सदी की दलित कविता में अस्मिता और प्रतिशोध	- प्रा.डॉ.भारत बा.उपाध्य	26
10	'तिरस्कृत' आत्मकथा में दलित चेतना	- डॉ. कोटुळे बायजा	29
11	भूमंडलीय अपसंस्कृति और 21 वीं शती की हिंदी कविता	– डॉ. अशोक मरळे	32
12	उदय प्रकाश कविता में सामाजिक संवेदना.....	– प्रा. डॉ. प्रकाश खुळे	36
13	"समकालीन आदिवासी कहानियां और संजीव"	–डा. संतोश रायबोले	39
14	21 वीं सदी का आत्मकथा साहित्य–.....	– डॉ.गोविंद गुंडप्पा शिवशेट्टे	42
15	यमदीप : किन्नरों.. कारामुंगीकर बालाजी गोविंदराव	– डॉ. पी. डी. चिलगर	45

Professor
J.B.S.P.Mandal's

38	अस्मिता की तलाश करती अनन्या–प्रभा खेता	–शेंडगे सुलभा वाघंबर	107
39	हिन्दी कहानियाँ और किन्नर विमर्श	–डॉ. काकानि श्रीकृष्ण	110
40	बाजारवादी अभिव्यक्ति की प्रस्तुति : इक्कीसवीं	–डॉ. हाशमबेग मिर्झा	113
41	समकालीन महिला कथाकारों के साहित्य में स्त्री चेतना	– डाने कायी	115
42	इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक के उपन्यासों में ...	– प्रा. डॉ. संतोषकुमार यशवंतकर	118
43	इक्कीसवीं सदी की कविता के संवेदना स्वर ...	– डॉ. पल्लवी भुदेव पाटील	121
44	**इक्कीसवीं सदी की कविता में मानवीय संवेदना**	- डॉ. एस. जे. पवार	123
45	अशोक वाजपेयी के काव्य में व्यक्त संवेदना	– प्रा.डॉ. सुजितसिंह शि. परिहार	126
46	समकालीन हिंदी दलित कविता और नारी	- उमा देवी	129
47	अमरकांत की कहानियों में स्त्री विमर्श	–डॉ के. सोनिया	134
48	इक्कीसवीं सदी के चुनी हुई महिला कथाकारों के साहित्य में नारी–विमर्श	प्रा. लेफ्टनंट डी. एस. चिट्टमपल्ले	141
49	'बेरोजगार' उच्चशिक्षितों की व्यथा का दस्तावेज	– प्रा.डॉ.बाबूगिरी महंतगिरी गिरी	144
50	इक्कीसवीं सदी की कविताओं में नारी की स्थिति	– डॉ.प्रवीण देशमुख	146
51	**हाशिये का समाज : आदिवासी उपन्यासों के संदर्भ में**	- नागापुरे संतोष	150

Our Editors have reviewed paper with experts' committee, and they have checked the papers on their level best to stop furtive literature. Except it, the respective authors of the papers are responsible for originality of the papers and intensive thoughts in the papers. Nobody can republish these papers without pre-permission of the publisher.

- Chief & Executive Editor

Professor
J.B.S.P.Mandal's
Mahila Mahavidyalaya, Ta.Georai, Dist. Beed.

'RESEARCH JOURNEY' International Multidisciplinary E- Research Journal
Impact Factor - (SJIF) - 6.261, (CIF) - 3.452(2015), (GIF)–0.676 (2013)
Special Issue -2- इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य : संवेदना के स्वर
ISSN : 2348-7143
February-2019

इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक के उपन्यासों में व्यक्त महानगरीय बोध

(शेश कादम्बरी, विजन, दिल्ली दरवाजा, इक आग का दरिया है,)

प्रा. डॉ. संतोषकुमार यशवंतकर
हिंदी विभाग
महिला महाविद्यालय, गेवराई ता. गेवराई जि.बीड महाराष्ट्र

महानगरों का विकास तब होने लगा जब देश के ग्रामीण उद्यम नष्टप्रायः होने लगे। छोटी बस्तियां फैलकर गांव, गांव फैलकर कस्बे, कस्बे–नगर तथा नगर–महानगर में परिवर्तित हो जाया करते है, ऐसा प्रकृति का नियम है। ग्राम व्यवस्था के चरमराने के उपरांत नगरो–महानगरों पर सबसे पहले तो आबादी का दबाव पडना प्रारंभ हो गया। एक तो नहरों–महानगरों की जनसंख्या वृध्दि की रफ्तार पहले ही तेज थी, उस पर काम धंन्धे की खोज में देहातों से पलायन कर आनेवाले लोगों ने दबाव को और भी बढा दिया। अतः निरन्तर बढ़ती जनसंख्या का दबाव महानगरों की एक विकट समस्या है। दूसरी समस्या है आवास की, जो बढती जनसंख्या का परिणाम है। जनसंख्या वृद्दि के अनुपात में आवास की व्यवस्था न हो पाने के कारण, महानगरों के आलिशान भावनों की बगल में झोपड–पट्टियों का निर्माण होने लगा। धीरे–धीरे इसने एक विकट समस्या का रूप धारण कर लिया है। फलस्वरूप महानगरों में गंदगी बढती गई, जिसका निदान आज तक भी संभव न हो सका। इनके अतिरिक्त निरंतर हो रहे औद्योगीकरण ने भी महानगरीय जीवन का कई तरह से प्रदूषित एवं समस्याग्रस्त बना रखा है। प्रदुषण की समस्या भी बड़ी गंभीर है। फलस्वरूप वहां शुध्द हवा, पानी का न मिलना। बिजली की समस्या तो वहां सदा से ही व्याप्त है। वहां के लोगों का आधा जीवन घर से कार्यालय जाने तथा आने में व्यतीत हो जाता है।

महानगरों में बेरोजगारी, पारिवारिक विघटन,मदिरा पान व मादक वस्तुओं का सेवन, सफेदपोष अपराधियों की समस्या, जात–पॉत की समस्या, जनसंख्या की समस्या, षिक्षा–विशयक समस्या, आर्थिक समस्या, नैतिक समस्याएं, मूल्यहीनता, यौन–कुण्ठाएं तथा विकृतियां, दाम्पत्य जीवन में एकरसता से उत्पन्न समस्याएं, एकाकी जीवन की समस्या, अवैध–संबधों के कारण बढते यौन रोग, आदी प्रमुख समस्याएँ है। महानगरों में सभ्यता का अंधानुकरण की प्रवृत्ति लगातार बढ़ रही है, जिसका दुषित प्रभाव देखने को मिलता है। आज मध्यमवर्ग महानगरों के बीच पिसता जा रहा है। आम नागरिक जिसकी जरूरत आज पैसा है, उसे एकत्र करने के उदेश्य से वह महानगरों की ओर खिचता चला जा रहा है। औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप नगरों का विकास हुआ। पाश्चात्य प्रभाव के कारण इनकी संस्कृति भी अलग रूप में विकसित हो रही है। आज व्यक्ति की सोच में परिवर्तन आया है, उसे जितनी सुख सुविधाएं प्राप्त है, वह उनसे अधिक प्राप्त करना चाहता है। उसकी यही भावना व्यस्तता, परेशानी, कृत्रिमता आदि अनेक विसंगतियां उत्पन्न कर देती है। मनुष्य आकर्षण के कारण महानगरों की ओर खिचा चला जा रहा है।

महानगरों में दिनोंदिन बढ़ती हुई गाडियों से तंग पड गए रास्तों को पार करना शेष कादंबरी उपन्यास की रूबी दी को भी दुष्कर महसूस होता है। महानगरों में व्यक्तियों की भीड, यातायात के साधनों की, इमारतों आदि की। इसमें दूसरों को ढूंढ़ पाना तो दूर की बात है, व्यक्ति स्वयं को ढूंढ़ पाने में असमर्थ है। वदहवास हुई भागती भीड में रूकने का तात्पर्य कुचले जाना ही होता है। संभवतः इसी कारण वहां के निवासी भीड का हिस्सा बनना अधिक प्रिय है। गतिशीलता का परिचायक महानगर व्यक्तियों को भीड़ में बदल देता है या फिर आदमी को निपट अकेला बना देता है। व्यर्थ वस्तुएं, जिनकी कोई भी उपयोगीता नहीं रहती भले ही वह हाड मांस का पुतला, इन्सान ही क्यों न हो! वे महानगरों में फेंकने के लायक समझी जाती है। दिल्ली दरवाजा उपन्यास की कथा का सूत्रधार किरदार भी दिल्ली की ऐसी ही भीड से रू–ब–रू होता है। लेखक को डर है कि भागती हुई भीड में रूके हुए बाधको कुचले जाने की भीड़ संस्कृति से अनजान किरदार कहीं दिल्ली में गुम हो जाए। किरदार पुरानी दिल्ली स्टेषन की ओर जाते हुए देखता है "भीड की भीड। बैचन, बैकैफ, थूकती बोलती, पान की पीकों से दीवारों पिलरों को रंगति रेंगती हुई भीड जैसे भीड़ नहीं दिल्ली रेंग रही है।'' पृ.2 ताले, दातुन, सस्ते रूमाल, तौलिये, गुटखे और बीडियां, टार्च और सेल बेचनेवालों के बीच पडे भिखारी, कोढी, लूले लंगडे, यतीम, मुफलित, कंगाल आदि के पास से

Professor
J.B.S.P. Mandal's
Mahila Mahavidyalaya, Ta. Georai

बिचकाकर निकलते लोग रिक्षा, ठेले, दूकानें, स्कूटर कोट इत्यादि व कन्धा छीलती भीड़ से भरी सड़के एवं बस अडडे, रेलवे स्टेशन, फुल आदि किरदार को परेशान कर देते है। ''जिस ओर भी सर उठाकर देखों। लोगों का हजूम है। सर की सर नजर आते है। जैसे दरिया हो लोगों का रवां–रवा। 3

दफ़्तर व विभिन्न कार्यालय महानगरों के अभिन्न अंग है। लाखों लोग आजिविका हेतु अलग–अलग कार्य स्थलों में नौकरी करते है। महानगरीय भीड़ का एक बडा हिस्सा इन्ही दफ्तरों एव संस्थाओं से जुडा है। भीड़ से त्रसद व्यक्ति ऑफिस में पहुंचकर दफ्तरी परिवेश से उपजी झुंझलाहट से भी टकराता है काम की व्यस्तता उसे चिड़चिड़ा बना देता है। छोटे से लेकर बडा कर्मचारी व पदाधिकारी अपने–अपने स्तर की व्यस्तता को ढोता है। ज्ञान चतुर्वेदी अपने 'हम न मरब' उपन्यास में लिखा है कि. ''भीड बहुत है। हमने बताया ही। ढेर सारे रिश्तेदारों की भीड़ है। बब्बा के चचेरे ममेरे फुफेरे भाई। यूं समझ लें कि जिसनें भी बब्बा की मौत का सुना वही उठकर यहां लुगासी चला आया है और ऐसे उत्साहपूर्वक आया है मानो सदियां से इस घटना की प्रतिक्षा में बैठा रहा हो। ... और भी कोई अंत नजर नहीं आ रहा है। नित्य नए रिश्तेदार आते चले जा रहे हैं। बुढ़े के मौत पर ऐसा होता ही नहीं। अति बुढ़े की मौत पर तो बिलकुल भी नहीं, उत्सव सा माहौल है।''

आज महानगरों की भीड़ में जी रहा आदमी इस कदर तनाव से पीड़ित है कि वह जरा–जरा सी बात पर बुरी तरह झुंझला कर मरने–मारने पर उतारू हो.जाता है। महानगरों की सड़कों पर तो हर आदमी जैसे तनाव के बारूद से भरा हुआ है। जरा सी तू–तू मैं मैं हुई नहीं कि जबाब में चाकू और तमचे निकल आते हैं। कहा–सुनी में जान ले लेने की घटनाएँ लगातार बढ़ रही है। शहर के कुछ लोगों के लिए भले ही भौतिक सुखों की खान हों, मगर वे आदमी को प्रकृति से लगातार दूर करते जा रहे है। शहर के उस शोर और मनुश्यों व इमारतों की भीड़ में बच्चे तक न परिंदों की चहचहाहट सुन सकते हैं, न रंगीन तितलियों को छू सकते हैं, न नदियों की कल–कल, न पत्तियों की सर–सर सुन सकतें है। मनोवैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि इसके कारण शहर के माहौल में दिमाग पर दबाव लगातार बढता जा रहा है और उसे काफी क्षति पहुंच रही है। एक अध्ययन में देखा गया हैं कि शहर की किसी भीड भरी जगह से गुजरते समय चंद मिनटों के भीतर याददाष्त कम होने लगती है जिसके कारण आदमी आत्मनियंत्रण खोने लगता है। लोगों को काम धंधे के लिए दूर–दूर जाना पडता है। रहने के लिए मकान बहुत महंगे मिलते हैं। महानगर में जलवायु से लेकर घी–दूध तक कुछ भी षुध्द नहीं होता। बडी संख्या में वाहन तथा कल–कारखाने से निकला धुआं पर्यावरण को दूषित कर देता है जो परस्पर प्यार, सौहार्द्र और सहयोग गांव में देखने को मिलता है। वह महानगर में नहीं मिलता। महानगर में व्यक्ति आत्मकेंद्रित होता है। महानगर में एक ओर से भॉंति–भॉंति के लोग आ जाते हैं। परिणामस्वरूप वहां हर तरह के अपराध भी होते रहते हैं।

महानगरों में पाश्चात्य सभ्यता किस तरह हावी हो रही है इसका चित्रण गिरीराज किषोर ने 'इक आग का दरिया है' इस उपन्यास में किया है ''लडकियों की जिंदगी में लकीर की फकीरी से हटकर हर कुछ धमाके में ही शुमार होता है। पृ.9 आगे वे मूल्य किस प्रकार परिवर्तित हो रहे है इसका बेबाक चित्रण किया है जैसे कि '' जहॉं वे अब रहते थे वह खुले वातावरण का एक बंद कैम्पस था। तलाक भी होते थे। एक दोस्त दूसरे दोस्त की पत्नी के साथ प्रेम भी कर बैठता था।'' पृ.21 इस प्रकार महानगरों में प्राचीन एंव नवीन मूल्यों में व्दव्द की स्थिति बनी रहती है और समय के साथ–साथ नये मूल्य प्रस्थापित होते जा रहे हैं।

महानगरीय गतिशीलता ने मनुश्य को यांत्रिक बनाकर उसकी संवेदनशीलता क़ा लगभग हरण कर लिया है। यंत्रों से कार्य करते–करते वह स्वयं यंत्र होता जा रहा है। उसके यंत्रवत जीवन में सहानुभूति, सौहाद्र, आत्मियता आदि का कोई स्थान नहीं। ऐसे में भावनात्मक बंधनों के अभाव व आत्मिय लगाव होने के बावजूद एक दूसरे को प्राप्त न कर सकने की विवषता है। ज्ञान प्रकाश विवेक ने अपने उपन्यास 'दिल्ली दरवाजा' में संवेदना को महानगर के लिए 'कबाड़' के रूप में वर्णित किया है, उनके अनुसार ''दिल्ली जैसे बडे षहर के बडे वास्तुविद् भी कहने लगे हैं कि घर में कबाड जमा करना, घर की सेहत और मनुष्य के अपने स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो सकता है।'' पृ. 11 महानगरीय जटिलता ने व्यक्ति की भावुकता को लगभग सोख लिया है।

शेष कादबंरी में क्लब एवं पार्टी के बढते प्रचलन को उदघाटित किया गया है। रूबी को [illegible] कि आजकल के अमीरों के मुंह खोलते ही पैसे टनटनाते है। उन्हें रूपये खर्च करने का बहाना [illegible] ''किस कदर छोटी–छोटी बातों पर कितनी हूं–हां! लडकी सोलह साल की हुई है, क्लब में पार्टी [illegible]

Professor
J.B.S.P.Mandal's
Mahila Mahavidyalaya, Tq.Georai, Dist